अध्याय चार

मेहरुन्निसा परवेज़ के उपन्यासों में शोषितवर्ग

अध्याय चार
मेहरुन्निसा परवेज़ के उपन्यासों में शोषितवर्ग

1. शोषित वर्ग

मेहरुन्निसाजी ने अपने उपन्यासों में स्त्रीविमर्श के साथ-साथ शोषित वर्ग का चित्रण भी किया है। शोषितवर्ग के अंतर्गत मज़दूर, निम्नवर्ग, मध्य निम्नवर्ग, आदिवासी लोग नारी आदि आते हैं। उनके पास श्रम के अलावा जीविका का कोई साधन नहीं होता है। यह वह वर्ग है जो प्रत्यक्ष श्रम करता है, पसीना बहाता है और अपने श्रम की मज़दूरी पाकर उससे जीविका चलाता है। हिन्दी साहित्य कोश में इस वर्ग के बारे में लिखा है - "यह समाज का वह भाग है, जो अपनी जीविका का उपार्जन श्रम से करता है और अधिकतर इस वर्ग का ही शोषण किया जाता है। इस वर्ग के अंतर्गत किसान, मज़दूर आते हैं।"[1] वर्तमान समाज में शोषित वर्ग रोजी-रोटी की समस्या हल करने में ही लगा हुआ दिखाई देता है। अर्थ के अभाव के कारण यह शिक्षा नहीं ले पाता और साधारण सुविधाओं तक से वंचित होता है।

1.1 शोषितवर्गीय जीवन का सामाजिक पक्ष

समाज सामाजिक संबन्धों का ताना-बाना है। मानव समाज का एक विशिष्ट इकाई है। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है इसलिए वह सामाजिक व्यवस्था का एक अंग है। समाज में रहना है तो समाज की मर्यादाओं का अनुसरण करना होता है। और विभिन्न समस्याओं का भी सामना करना होता है। इन समस्याओं का सबसे बडा शिकार नारी है।

---

1. हिन्दी साहित्य कोश - सं. धीरेन्द्र वर्मा - पृ. 449

'अकेला पलाश' उपन्यास में तहमीना को विभिन्न प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ता है। परिवार में जब लड़की बड़ी होती है तो उसकी शादी की चिन्ता हमेशा उसके माँ-बाप के मन में रहता है। पुराने ज़माने के समाज में बाल-विवाह की प्रथा थी। तहमीना भी इस कुप्रथा की शिकार बनी। 'कितने सुखद सपने थे, स्मृतियाँ थीं जो एक डिब्बी में बंद थी, पर जब डिब्बी खुली, तहमीना ने देखा सपने हवा की तरह उड गये और खाली डिब्बी उसके सामने थी। सपनों से भरी नींद टूटी भी तो यथार्थ की कठोर धरती पर कम उम्र की तहमीना, जिसका शरीर भी अभी पूर्ण रूप से विकसित नहीं हो पाया था, बिलकुल उसी तरह जिस तरह खेत में नन्हे-नन्हे पौधे बढ़ते हैं, लालायित रहते हैं पानी के लिए, उचित हवा के लिए, उचित स्वाद के लिए, पर अचानक बाढ का पानी आता है, आँधी से भरे झोंके आते हैं और एकाएक उन पौधों का जीवन नष्ट हो जाता है....। बस वही हाल तहमीता का था। उसका बचपना जो अभी पूर्ण रूप से गया भी नहीं था और जवानी आयी भी नहीं थी, अभी तो उसे कुछ पानी और कुछ हवा की आवश्यकता थी, पर अचानक आये बाढ के पानी ने और आँधी के झोकों ने सब कुछ नष्ट कर दिया।'[1] यहाँ तहमीना के माँ ने अपने पति को उत्तरदायित्व बनाने के लिए बेटी की आहुति दी। उसका बालविवाह कर दिया। जब तहमीना की विवाह हुआ तब उसे शादी का मतलब भी मालूम नहीं थी। तहमीना की माँ ने खुद की अस्तव्यस्त और असुरक्षित जिन्दगी के कारण बेटी को इस सामाजिक कुप्रथा का शिकार बनाकर अपनी जिम्मेदारी से छुटकारा पाना चाहती थी।

मेहरुन्निसाजी ने 'कोरजा' उपन्यास में भी बालविवाह का चित्रण किया है। 'कोरजा' उपन्यास के स्त्री पात्र अरमान ने अपनी बेटी का बाल-विवाह करा दिया था।

---

1. अकेला पलाश - मेहरुन्निसा परवेज़ - पृ. 101-102

क्योंकि उन्हें डर था कि कहीं पिता की हवस का शिकार बेटी न बन जाये। "अरमान बी वक्त की मार खाई अनुभवी औरत थी। पारखी आँखों ने ताड लिया और पति को बाज-सा जा पकड़ा। वह समझ गई की अचानक लड़की की ओर बाप का प्रेम नहीं उमडा है बल्कि यह मक्कार आदमी की बहशी आखों का पाती था, जो घर में फुदकती नये परों की फडफडाती चिडिया को एक ही बार में दबोच लेना चाहता था।"[1] अरमान ने अपनी बेटी की इज्ज़त बचाने के लिए कम उम्र में ही उसकी शादी करा दी।

विभिन्न तरह के सामाजिक समस्याओं का चित्रण मेहरुन्निसाजी ने अपने उपन्यासों में किया है। जैसे छुआछूत अथवा जाति-व्यवस्था, अंतर्जातीय विवाह, तथा अवर्ण और सवर्ण की समस्या। लोग अगर विशाल दृष्टिकोण को अपनायेगे तो अंतर्जातीय विवाह, जातीवाद, छुआछूत अवर्ण और सवर्ण की समस्या को दूर करने में सहायक हो जाते। इससे दहेज प्रथा को भी रोक सकते हैं, योग्य जीवन साथी का चुनाव करने में सहायक भी है, परन्तु भारतीय परिवार अपने सांस्कृतिक बंधनों मे जकडा है, खासकर अवर्ण, सवर्ण और छुआछूत की भावना में बँधे हुए है। अंतर्जातीय विवाह आज भी समाज में सहर्ष स्वीकार्य नहीं है। मेहरुन्निसा परवेज़ के 'अकेला पलाश' उपन्यास के स्त्री पात्र नाहिदबाजी एक डॉक्टर है। किन्तु जाती की दृष्टि से मुसलमान है। वह अपने साथ काम करनेवाले डॉ. महेश से शादी करना चाहती है। महेश हिन्दु परिवार का सदस्य है। महेश की माँ शादी के लिए अनुमति नहीं देती। महेश और नाहिदबाजी दोस्तों की सहायता से कोर्ट मेरेज कर लेते हैं। इकलौता बेटा होने के कारण महेश अपने परिवार के साथ ही रहना चाहता है। नाहिदबाजी इसके लिए तैयार होती है किन्तु महेश की माँ उसे बहु के रूप में नहीं अपनाती। इस स्थिति के बारे में नाहिदबाजी तहमीना से कहती

---

1. कोरजा - मेहरुन्निसा परवेज़ - पृ. 20

है - "छुआछूत इतना मानती है कि बस, मैं मुसलमान लड़की हूँ। इससे मेरे हाथ का छुआ नहीं खाती। मेरी रसोई अलग है, उसकी अलग है।"[1]

नाहिदबाजी एक मुसलमान लड़की होने के कारण उसे अपने ससुराल में बहुत कुछ सहना पडा। महेश की माँ नाहिदबाजी के हाथ का छुआ खाना तक नहीं खाती थी। तभी तो एक ही घर में दो रसोई है। बहुत सारे अरमानों के साथ नाहिदबाजी ने अपनी दाम्पत्य जीवन शुरू किया था लेकिन उनकी सारी सपने टूट गये। इन सब सामाजिक समस्याओं का शिकार हमेशा नारी ही होती है।

जाति-व्यवस्था का चित्रण मेहरुन्निसाजी ने 'समरांगण' उपन्यास में भी किया है। गोपीलाल एक काश्मीरी पंडित है और वह शादीशुदा भी है। फिर भी वह बूँदाजान से प्यार करता है। बूँदाजान एक मुसलमान युवती है। दोनों का प्यार इतना गहरा हो गया कि बूँदाजान गर्भवती हो गयी। यह सुनकर गोपीलाल जात-पाँत की बात उठाता है। वह कहता है कि तुम मुसलमान मैं हिन्दु इसलिए ही समाज इस संबन्ध को नहीं मानेंगे। "ऊपर वाले की इच्छा कहकर हम बात को समाप्त नहीं कर सकते। देखो अभी तो जीवन में ऊपर उठना है। प्रेम-प्रेम ही बना रहता तो ठीक था। जाने समाज किस तरह देखेगा। तुम मुसलमान मैं हिन्दु।"[2] यहाँ मेहरुन्निसाजी ने जाति-व्यवस्था की ओर इशारा किया है।

अनमेल विवाह भी एक सामाजिक समस्या है। लड़की को कम उम्र में ही शादी कराना हर माँ-बाप अपना कर्तव्य समझते हैं। कुँवारी बेटी घर में रहे तो समाज बडा पाप समझता है। इसलिए जल्दी ही उसकी शादी कराना चाहते हैं। खासकर

---

1. अकेला पलाश - मेहरुन्निसा परवेज़ - पृ. 171
2. समरांगण - मेहरुन्निसा परवेज़ - पृ. 131

आदिवासी ग्रामीण प्रान्तों में बचपन में ही लडकियों का विवाह कराते हैं या अनमेल विवाह कराने के लिए भी पीछे नहीं हटते। समाज की गुलामी से शोषित नारी को उससे बाहर आने का साहस नहीं होता। अनपढ़ लोग सोचते है कि लड़की की शादी जल्दी करें तो सुरक्षित रहेंगी। ऐसी मान्यता है समाज में। इसलिए वय और रुचि को देखे बिना शादी करा लेते हैं। इस प्रकार के सामाजिक व्यवस्थाओं के कारण नारी जीवन भर रोती रहती है और पुरुष के शोषण का शिकार बनती है। मेहरुन्निसाजी के उपन्यास 'अकेला पलाश' में भी इसी प्रकार की एक सामाजिक समस्या का वर्णन मिलता है। विवेच्य 'अकेला पलाश' उपन्यास में नायिका की माँ खुद अपने जीवन की असुरक्षा और अस्थिरता के कारण अपनी बेटी तहमीना को उसके पिता के उम्रवाले आदमी के साथ शादी कराने के लिए तैयार होती है और शादी करा देती है। माँ की इस हरकत की वजह से तहमीना को जीवन भर मुश्किलें झेलनी पडी। इसका एहसास तहमीना के शब्दों से प्रकट होता है। वह कहती हैं - "उसका जीवन भी कैसा है, वह इस घर में सफल गृहिणी है, सफल माँ है। पर वह चाहकर भी सफल पत्नी नहीं बन पाई। चाहकर भी वह जमशेद को पति नहीं मान पायी।"[1]

इससे पता चलता है कि तहमीना अपने दांपत्य जीवन से खुश नहीं थी। तहमीना के अनुभवों से पता चलता है कि अनमेल विवाह के कारण स्त्री को जिन्दगी भर रोना पड़ता है। समाज में ऐसी असंख्य नारियाँ है जो तहमीना की तरह दांपत्य सुख से वंचित होकर मानसिक कुंठाओं से ग्रस्त रहती है।

मेहरुन्निसाजी के 'कोरजा' उपन्यास में भी अनमेल विवाह का चित्रण मिलता है। डॉक्टर माधवदास काफी दिनों से विधुर थे। जवान-जवान बेटे हो गए थे इसलिए

---

1. अकेला पलाश - मेहरुन्निसा परवेज़ - पृ. 82

दूसरी शादी का विचार नहीं था। पत्नी के मर जाने पर दूसरी शादी न करना उन दिनों आश्चर्यवाली बात मानी जाती थी। दो-तीन ब्याह रचाना उन दिनों मर्द का रईस होने का सर्टिफिकेट था।

"शोना बीमार पडी। हरिदास बेटी को लेकर माधवदास के पास आया। लड़की का रूप देखकर डॉक्टर साहब चकित रह गए। दूसरे दिन हरिदास के घर डॉक्टर माधव का रिश्ता भेजा गया। हरिदास धन्य हो उठा। उन दिनों बस्तर में थे ही कितने डॉक्टर? डॉक्टर को सबसे बडा आदमी माना जाता था।"[1]

यहाँ शोना की उम्र मुश्किल से बारह वर्ष होगी और डॉक्टर माधवदास जवान बेटेवाले एक बूढा आदमी था। शोना के पिता डॉक्टर का वैभव देखकर अपनी बेटी की शादी उससे करा देता है। और शादी के कुछ साल बाद डॉक्टर का देहान्त हो जाता है। शोना विधवा हो गई यहाँ शोना नामक लड़की अनमेल विवाह जैसी सामाजिक समस्या का शिकार बन जाती है।

इसप्रकार के एक संदर्भ मेहरुन्निसाजी कृत 'समरांगण' उपन्यास में भी देखने को मिलते हैं। "सेठानी बहुत सुंदर है, इनकी पुत्री के बराबर है, गरीब घर की है, पैसा लेकर माता-पिता ने ब्याह करा दिया है। अभी भी रोज वसूल कर ले जाते हैं। सेठजी अपनी पत्नी की सुंदरता पर मोहित रहते हैं। संबन्ध दोनों के पति-पत्नी के नहीं है।"[2]

यहाँ पैसे के लिए माधवी के माँ-बाप ने उसकी शादी एक अमीर बूँढे के साथ करा दिया। अपने स्वार्थ के लिए माधवी के माँ-बाप ने ही अपनी बेटी का इस्तेमाल किया।

---

1. कोरजा - मेहरुन्निसा परवेज़ - पृ. 127
2. समरांगण - मेहरुन्निसा परवेज़ - पृ. 103

और एक सामाजिक समस्या है दहेज प्रथा। समाज में दहेज का बहुत बडा महत्व है। शोषित वर्ग के लिए दहेज प्रथा बहुत बडा बोझ है। जिसे जुटाने के लिए उसे कठिन मेहनत करना पड़ता है। दहेज देना उनके लिए इज्जत का सवाल होता है। 'कोरजा' उपन्यास में दहेज समस्या का चित्रण किया गया है। "शादी के लिए पैसे कहाँ है? माना कि वह लोग कहते हैं कि लड़की को एक जोडे से विदा कर दो। आज उनकी गरज है, उनका लड़का आधी उम्र का है, इसलिए लड़की नहीं मिल रही तो ऐसा कह रहे हैं। पर कल यही लोग लड़की को ताना देंगे कि तेरे मायके से तो तुझे कुछ नहीं मिला। मैंने दुनिया देखी हैं, मैं जानती हूँ, अपनी गरज के टाइम शेर भी बकरी बन जाता है, पर बाद में बकरी भी शेर हो जाती है।"[1]

यहाँ नानी रब्बो की शादी के लिए दहेज न जुटा पाने से परेशान है। क्योंकि वह जानती है कि अगर दहेज न देंगे तो रब्बो को ससुराल में ताने सुनने पडेंगे। इसलिए नानी रब्बों के लिए किसी भी तरह से दहेज जुटाना चाहती है। आजकल समाज में दहेज प्रथा एक बहुत बडी समस्या है। इस समस्या का शिकार हमेशा गरीब घर की लड़कियाँ ही होती है।

आधुनिक युग की एक बहुत बडी सामाजिक समस्या बढ़ती हुई महँगाई है। इस समस्या का शिकार भी हमेशा की तरह शोषितवर्ग ही होता है। मेहरुन्निसाजी ने 'कोरजा' उपन्यास में बढ़ती महँगाई की ओर इशारा किया है।"साबुन महँगा हो गया है। लाइफबॉय साबुन जो पहले एक बट्टी सब बाल-बच्चा में महीना चल जाता था अब पंद्रह दिन नहीं चलता। आधी हो गई है अब बट्टी।"[2]

---

1. कोरजा - मेहरुन्निसा परवेज़ - पृ. 177
2. वही - पृ. 139

महँगाई इतना बढ गया कि निम्नवर्ग के लोग जो कुछ भी कमाते हैं वह सारा पैसा एक दिन के खाने-पीने में ही खर्च होता है। "चार आने से कम में तो कोई चीज नहीं मिलती है महँगाई के मारे तो नाक में दम आ गया है। पेट को खाये या तन ढाँके। जितना कमाते है दो टाइम की पेट की आग में ही चला जाता है।"[1] यह 'कोरजा' उपन्यास की एक स्त्री पात्र का कथन है। उसकी राय में महँगाई इतनी बढ़ गयी है कि चार आने से कम में कोई चीज़ नहीं मिलती। जो भी पैसे हाथ में आते हैं वह सिर्फ दो टाइम की कमाने के खर्च में ही चला जाता है। बचाकर रखने के लिए कुछ भी नहीं बचा।

1.2 शोषितवर्गीय जीवन का आर्थिक पक्ष

मानव की सृष्टि जब से इस भूमि में हुआ तब से उसकी आवश्यकतायें बढती गयी। और इन सब आवश्यकताओं की पूर्ती के लिए अर्थ अर्थात् पैसे की जरूरत पडी। पैसे और समाज का संबन्ध पुराना है। और वह अटूट भी है। आज के समाज में अर्थ को ही प्रधानता दिया गया है। इस आधुनिक युग में पैसे ने मानव पर कब्जा कर लिया है। समाज सिर्फ पैसेवालों को ही इज्जत देता है। जिसके पास पैसे नहीं उसे समाज से ललकार, अपमान और अवहेलना के सिवा कुछ नहीं मिलता है। आज के युग में वर्ग निर्धारण भी अर्थ के आधार पर होता है। अर्थात् जिसके पास धन है वह उच्चवर्ग और जिसके पास नहीं वह निम्नवर्ग में आता है।

आर्थिक समस्या ग्रामीण समाज में सबसे कठिन समस्या है। बिना अर्थ के जिन्दगी कटता नहीं। हर व्यक्ति रोटी, कपडा और मकान के लिए लड़ता रहता है। "धन मूल इदम् जगत" कहा जाता है। मेहरुन्निसाजी के 'अकेला पलाश' उपन्यास में आर्थिक समस्या का चित्रण किया गया है। आर्थिक विषमता के कारण गाँव में गरीबी बढ़ जाती

---

1. कोरजा - मेहरुन्निसा परवेज़ - पृ. 99

है। गरीबी के कारण बच्चों को पौष्टिक आहार भी नहीं मिलता। "तहमीना ने उस दिन खुद अपनी आँखों से देखा था। गाँव की कुछ औरतें चावल का कोडा, जिसे गाय-भैसों को खिलाया जाता है, उसे बारिक छीनकर और मोटी-मोटी हाथ से रोटी बना रही थी। उसे देखकर आश्चर्य लगा था कि कोंडे की रोटी कैसे खाई जा सकती है? क्या इन्सान अब गाय-भैसों की श्रेणी में आ गया है? सच है, पेट की आग बुझाने के लिए क्या-क्या नहीं करना पडता।"[1]

लोग अपनी भूख की आग को मिटाने के लिए कुछ भी खाने को तैयार हो जाता है। यहाँ तक की गाय - भैसों का खाना तक खा लेते हैं। उपन्यास की नायिका तहमीना ने देखा कि एक आदिवासी स्त्री गाय - भैसों को देनेवाली चावल का कोडा से रोटी बना रही है। उसे यह देखकर आश्चर्य लगा कि ऐसी खाना भी कोई खा सकता है।

गरीबी परिवार की जडों को खोखला बना देती है। इन्सान जब भूखा होता है तब वह न तो पारिवारिक होता है, न ही सामाजिक। वह सिर्फ स्वार्थी होता है। इसका चित्रण 'कोरजा' उपन्यास में मेहरुन्निसा परवेज़ ने किया है। "जब देखो, तब साला वही पैसा-पैसा, मैं भी इंसान हूँ लाऊँ तो कहाँ से? तुम मुझे घर के खर्च के लिए पूरे इकट्ठे पैसे क्यों नहीं दे देते।"[2] इस तरह आर्थिक अभाव नसीमा के माँ और पिता के बीच पारिवारिक विघटन का कारण बन जाता है।

एक निम्नवर्गीय परिवार में पैसे आते हैं तो, कभी मेहनत से कभी पाप के रास्तों से। ऐसा ही एक संदर्भ मेहरुन्निसाकृत 'कोरजा' उपन्यास में देख सकते हैं। "साजो खाला रोज जुम्मन मामू के घर जाती हैं, उन्हीं के पास नानी के सारे खेत और यह मकान

---

1. अकेला पलाश - मेहरुन्निसा परवेज़ - पृ. 55
2. कोरजा - मेहरुन्निसा परवेज़ - पृ. 21

भी गिरवी हैं। खेत और मकान दोनों डूब गए हैं, चाहे तो जुम्मन मामू हम सबको घर से निकलवाकर कब्जा ले सकता है, पर एक तो उसने नानी का नमक खाया है, दूसरे बदले में साजो खाला ने अपने को बेच दिया है। इस मकान की कीमत से बढ़कर होती है शायद औरत की इज्जत।"[1]

यहाँ साजोखाला ने जुम्मन बापू के कर्जा चुकाने और अपने परिवार को सडक में आने से बचाने के लिए अपने को बेच दिया। वह ऐसा नहीं करती तो जुम्मन बाबू सबको घर से निकलवाकर घर पर कब्ज़ा कर लेता। जुम्मन बाबू जैसे महाजन लोग एक स्त्री के शरीर का सौदा करके, उसके इज्ज़त को मिट्टी में मिलाके गरीब घर के लोगों का शोषण करते हैं।

आज का युग अर्थप्रधान युग है। इस अर्थप्रधान युग में जिसके पास पैसे होते हैं उसे ही समाज में प्रतिष्ठा मिलती है। कोरजा उपन्यास में नसीमा कहती है। "'इज्जत' आज के जमाने में इज्जत सिर्फ पैसेवालों की है, पैसे से ही दुनिया में इज्जत है। पैसा पास है तो सब पूछेंगे वरना कोई नहीं।"[2] समाज में पैसा ही इज्जत का मापतोल है। तभी तो निम्नवर्ग का समाज में कोई इज्जत नहीं है, क्योंकि उनके पास पैसे नहीं है। शोषित लोगों की इज्जत उच्चवर्ग के लोग पैसे से खरीद रहे हैं। 'कोरजा' उपन्यास का पात्र अमित कम्मो के इस प्रश्न का उत्तर देते हुए कहता है "आदिवासी लड़कियाँ शहरी बाबुओं की ओर आकर्षित हो रही हैं इस पर आदिवासियों ने कुछ नहीं किया?"

"किया क्यों नहीं, पंचायत बुलाई। लौटी हुई लड़कियों को वापस घरों में रखने से इंकार किया। युवा पुरुषों में आक्रोश बढ़ा, घर की औरत शहरी बाबुओं की ओर

---

1. कोरजा - मेहरुन्निसा परवेज़ - पृ. 71, 72
2. वही - पृ. 94

आकर्षित हो रही थी, जंगली फूलों पर शहरी भँवरे मँडरा रहे थे। पैसे से उनकी घर की इज्जत खरीदी जा रही थी।"[1] निम्नवर्ग के घरों की कुँवारी लड़कियों को उच्चवर्ग के लोग पैसों का लालच देकर अपनी ओर आकर्षित कर रहे हैं। उनकी इज्जत को पैसे देकर खरीद रहे हैं। अनजान और अशिक्षित लड़कियाँ उनके प्यार में पड़कर अपना सब कुछ कुर्बान कर रही है।

गरीबी, संयुक्त परिवार को आगे बढ़ाने में निम्नवर्ग को असमर्थ बना देता है। 'कोरजा' उपन्यास में गरीबी के कारण अपने संयुक्त परिवार को आगे बढ़ाने में कष्टताएँ झेलनेवाली नानी का चित्रण किया गया है। "नसीमा सोचने लगी, नानी इस घर के लिए कितना करती हैं। यह उम्र तो आराम की है पर वह फिरकी-सी घूमती रहती हैं। कपड़े सिलती हैं, अंडे बेचती हैं, दूध बेचती हैं, बड़ी-पापड़ बनाती हैं।"[2]

नानी अपने घर को चलाने के लिए तरह-तरह के काम करके पैसा इक्कट्ठा करती है। नानी की यह उम्र आराम करने की उम्र है, फिर भी वह अपनी परवाह न करके अपने घर को चलाने के लिए आगे बढ़ती है और सब को अपने घर में आश्रय देती है। और नानी को यह डर हमेशा सताती रहती है कि कब तक अपने परिवारवालों को सम्भालेगी। "नानी छाती पीट-पीट कर रोती रह गई - हाय मुझ बूढ़े खूँटे से सब को बाँध गया, मेरा क्या भरोसा जरा रस्सी कसी और खूँटा टूटा, हाय इन सब को किस टुकने से ढाँकूँगी।"[3] इसमें एक निम्नवर्ग की स्त्री के अपने परिवारवालों के प्रति आकांक्षाओं का चित्रण किया गया है।

---

1. कोरजा - मेहरुन्निसा परवेज़ - पृ. 108
2. वही - पृ. 75
3. वही - पृ. 94

गरीबी का बड़ा मार्मिक चित्रण मेहरुन्निसाजी ने अपने उपन्यास कोरजा में किया है। 'इतनी फैली, व्यस्त गृहस्थी कैसे सिमट-सी गई थी, अब तो सुबह खाए तो शाम की चिंता सताने लगती है। पहनने के लिए कपड़े नसीब नहीं होते। गरम कपड़ों का तो सवाल ही नहीं होता। बच्चे ठंड से ठिठुरते स्कूल जाते हैं। दिन को धूप और रात को आग, बस यही अब कपडे रह गए हैं। इन दिनों नानी ज्यादा चिड़चिड़ी हो उठती हैं, शायद उन्हें अपना इन दिनों खाली रहना खलता है, खालीपन बार-बार आकर जैसे एहसास दिलाता है कि तुम गरीब हो गए हो, गरीब हो गए हो।'[1] यहाँ नानी के घर की गरीबी का चित्रण किया गया है। इन लोगों को यहाँ तक कि बच्चों को भी पहनने के लिए कपडे नहीं है और तीन वक्त का खाना भी नहीं मिलता। ठंठ के दिन आते हैं तो पहनने के लिए एक भी गरम कपडा नहीं है। बच्चे ठंठ में ठिठुरते रहते हैं। इसतरह नानी को अपने गरीब होने का एहसास हमेशा खलता रहता है।

पहले तो कम से कम त्योहार के दिनों में नये कपडे और खाने के लिए अच्छा खाना मिलता था। लेकिन अब वह भी नसीब नहीं होता। शोषित वर्ग के लिए त्योहार कब आता है और कब जाता है यह पता नहीं चलता। "त्योहार भी आते हैं, अब कोई नहीं जानता था। न त्योहारों पर पहनने को नए कपडे थे, न खाने के लिए अच्छी चीजें। हाँ त्योहारवाला दिन ज़रूर ऐसा लगता था कि इस घर के बाहर कहीं हलचल है, शोर है, गर्मी है, जिसकी आँच यहाँ तक पहूँच रही है, जिसकी आवाज यहाँ तक आ रही है या और छुट्टियोंवाला ही कोई दिन जिसमें बस फुर्सत-ही-फुर्सत है।'[2]

आजकल त्योहार भी उच्चवर्ग तक सीमित रह गया है। क्योंकि त्योहार मनाने के लिए आजकल बहुत सारा पैसा खर्च करना पड़ता है। यह निम्नवर्ग के लिए संभव नहीं है।

---

1. कोरजा - मेहरुन्निसा परवेज़ - पृ. 207
2. वही - पृ. 207

शोषित वर्ग में जो पढ़े-लिखे युवा लोग होते है वे कोई भी काम करने को तैयार रहते हैं। क्योंकि अपने घर को चलाने के लिए इनके पास और कोई चारा नहीं है। 'अकेला पलाश' उपन्यास के विपुल ऐसा ही एक पात्र है। "फिर इसमें शर्म की क्या बात है, घर की हालत ही ऐसी है कि एक-एक पैसा हमारे लिए कीमती है, उसे बचाना जरूरी है। फिर दीदी मैं समझता हूँ, कि काम चाहे कोई भी हो, उसे करने में हमें शर्म नहीं आनी चाहिए।"[1]

ये लोग एक-एक पैसे की कीमत समझते हैं। इसलिए पढे-लिखे होते हुए भी कोई भी काम करने से ये लोग हिचकते नहीं है। विपुल पढ़ा-लिखा लड़का है। फिर भी उसे नौकरी नहीं मिली। इसलिए वह अपने परिवार को पालने के लिए मज़दूरी करता है।

कुछ अनपढ़ मज़दूर लोग ऐसे होते हैं जिन्हें सिर्फ आज से मतलब है। कल के लिए कमाकर रखने की विचार उनमें नहीं है। इसका चित्रण मेहरुन्निसाजी ने अपने उपन्यास 'अकेला पलाश' में किया है। 'मज़दूरी भी इस सीजन में डबल-ट्रिपल हो जाती है। इतने पर भी इन्हें मज़दूर नहीं मिल पाते, क्योंकि सब महुआ बीनने जाते हैं। इन दिनों इन लोगों का भोजन भी महुआ होता है। महुआ को यह लोग उबाल कर खाते हैं या फिर भूनकर खाते हैं, थोडा ही खा लेने पर पेट भर जाता है। फिर ऊपर से महुआ का शराब बनाकर पीते हैं। गरज यह हैं कि महुआ से इनकी हर तरह से उदरपूर्ति हो जाती है। इसलिए इन्हें काम करने की, रोजी कमाने की बिलकुल चिन्ता नहीं रहती।'[2]

पैसे कमाना, या कल के लिए पैसा बचाकर रखना, ऐसी विचार इन मज़दूर लोगों को नहीं है। उन्हें तो बस आज उदरपूर्ती हो जाय यही इनके लिए बहुत बडी बात है।

---

1. अकेला पलाश - मेहरुन्निसा परवेज़ - पृ. 49
2. वही - पृ. 162

'कोरजा' उपन्यास में मेहरुन्निसाजी ने बडे मार्मिक ढंग से गरीबी का चित्रण किया है। 'वक्त क्या-से-क्या होता जा रहा था। गरीबी जैसे इसी घर में धरना देकर हमेशा के लिए बैठ गई थी। रब्बो आपा की शादी के बाद से जैसे घर के खर्च के लिए हर आदमी हर बच्चे को एहसास हो गया था। घर का बच्चा तक समझने लगा था कि पेट की आग बुझाने के लिए, अपने आप को जिंदा रखने के लिए, पेट भरा रहना ज़रूरी है। और पेट भरने के लिए पैसे चाहिए। इस शादी के बाद से दोनों बच्चों में जाने कहाँ से एहसास पैदा हो गया था कि वे दोनों एक दिन कहने लगे, "नानी, मेरा एक दोस्त है। वह सुबह मूँह-अँधेरे उठता है और सड़कों से गोबर उठा-उठा कर लाता है। साल भर जमा करता है। उसकी जब खाद बन जाती है तो उसे बेच देता है। क्यों न हम लोग ऐसा करें?"[1]

रब्बो की शादी के बाद नानी के घर का आर्थिक संतुलन बिगड जाता है। गरीबी का एहसास घर के एक-एक सदस्य को भी होने लगी। यहाँ तक कि बच्चों को भी इसका एहसास हो गया। पेट भरने के लिए पैसे की ज़रूरत है यह सच बच्चे भी समझने लगे। तभी तो वे भी घर के लिए कुछ करना चाहते हैं।

नौटंकीवाले अपनी आर्थिक पूर्ती कैसे करते हैं इसका चित्रण मेहरुन्निसाजी ने 'समरांगण' उपन्यास में चित्रित किया है। "रोज़, ज़मींदारों की ड्योढ़ी में होने वाली नौटंकी की अपनी अलग ठसक होती थी। धीरे-धीरे गदर ने नौटंकी की चमक को समाप्त कर दिया था। पहले नौटंकी का व्यवसाय नट लोग ही करते थे। पहले ब्याह शादी में भी नट लोग नौटंकी लगाते थे, बरात में जाते थे। नट तो ब्याह में ढोलक और तुरही बजाता बरात में आगे-आगे भी चलता था। ढोलक और तुरही की आवाज़ से ही लोग समझ जाते थे कि बरात आ गई है। बरात का उद्घोषक हुआ करता था। ढोल पीटकर

---

1. कोरजा - मेहरुन्निसा परवेज़ - पृ. 205-206

बरात के आगमन की सूचना देता था। गाँव से आराम से अनाज, इनाम, रुपया मिल जाता था। रबी और खरीफ़ की फसलों में भरपूर अनाज मिल जाता था, बाकी दिन यह अपनी कला के प्रदर्शन से कमाते थे।"[1] नौटंकीवालों ने अपने जीविकोपार्जन का अनोखा तरीका बना लिया था।

गरीबी घर के लोग पैसे के लालच में अपनी बेटी तक को बेच लेते हैं। ऐसा ही एक चित्रण 'समरांगण' उपन्यास में मिलता है। "सेठानी बहुत सुंदर है, इनकी पुत्री के बराबर है, गरीब घर की है, पैसा लेकर माता-पिता ने ब्याह दिया है। अभी भी रोज़ वसूल कर ले जाते हैं। सेठजी अपनी पत्नी की सुंदरता पर मोहित रहते हैं। संबन्ध दोनों के पति-पत्नी के नहीं है।"[2] यहाँ आर्थिक विपन्नता का चित्रण हुआ है। माता-पिता ने अपनी बेटी का किसी अमीर बूढ़े आदमी के साथ शादी करा दिया है। और बदले में उस आदमी से पैसे लेते है। इस तरह पैसे के लालच में माँ-बाप अपनी बेटी की जिन्दगी को भी दाव पर लगा देते हैं।

इस प्रकार शोषितवर्ग के आर्थिक पक्ष का चित्रण मेहरुन्निसाजी ने अपने उपन्यासों द्वारा किया है।

1.3 शोषितवर्गीय जीवन का धार्मिक पक्ष

किसी भी संस्कृति का प्रमुख तत्व है धर्म। शुरू से ही हमारा समाज धार्मिकता से प्रेरित रहा है। अपने बुद्धि के बल पर मनुष्य ने अपने जीवन में सबकुछ हासिल किया। फिर भी मानते हैं कि प्रकृति और मनुष्य जीवन को नियंत्रित करनेवाली कोई दिव्य और अलौकिक शक्ति है। मनुष्य संस्कार का निर्माण धर्म से होता है। शरीर, मन एवं आत्मा

---

1. समरांगण - मेहरुन्निसा परवेज़ - पृ. 97-98
2. वही - पृ. 103

की शुद्धता के साथ ही धर्म विचार और व्यवहार को भी आदर्श बनाता है। आदिकाल से आधुनिक काल तक धर्म की धारणा में परिवर्तन आए हैं लेकिन लोगों का धर्म के प्रति आस्था में परिवर्तन नहीं आया। उनका विश्वास है कि धर्माचरण से मनुष्य को लाभ, आरोग्य, वंशवृद्धि, भौतिक सुख, दीर्घायु, यश समृद्धि और मोक्ष की प्राप्ति होती हैं। धार्मिकता ही उत्कृष्ट मूल्यों का संचय है। व्यवहारिक हिन्दी कोश में लिखा है - "धर्म नैतिक कर्तव्यों और नियमों की वह पद्धति है जिसके पालन से व्यक्ति लोक और परलोक दोनों में यश और पुण्य का लाभ करता है।"[1]

आज समाज में धर्म के नाम पर अनेक अत्याचार हो रहे है। दया, प्रेम और सहानुभूति का भाव धार्मिक स्थलों में भी आजकल देखने को नहीं मिलता।

शोषित वर्ग को पूजा-पाठ, व्रत-उपवास आदि के प्रति आस्था दृष्टिगोचर होती है। शोषितवर्गों में ज़्यादात्तर लोग अशिक्षित है। इसलिए ही ये लोग अंधविश्वासों के शिकार बनते हैं। हमारे समाज में कई प्रकार के अंधविश्वास प्रचलित है। ऐसे ही कुछ अंधविश्वासों का चित्रण मेहरुन्निसाजी ने अपने उपन्यासों में किया है। "नसीमा, जा अपने अब्बा को बुला ला, कहना दादी को सकरात लगी है। जल्दी से दूध बख्शा लो, वरना कयामत तक माँ केदूध का कर्जा सिर रहेगा, अम्मा जल्दी-जल्दी धबराहट में बोल रही थीं।'[2] इन लोगों का मानना है कि मरनेवाले व्यक्ति को अगर दूध नहीं बख्शा तो इसका पाप कभी भी सिर से नहीं हटेगा।

बूढ़े और अनपढ़ लोग ही ज्यादात्तर इन अंधविश्वासों को मानते हैं। 'कोरजा' उपन्यास का पात्र 'नानी' एक उदाहरण है। "ज़रूर किसी ने दरवाजे पर कुम्हड़ा फोडा है,

---

1. व्यवहारिक हिन्दी कोश - सं. भोलानाथ तिवारी - पृ. 165-166
2. कोरजा - मेहरुन्निसा परवेज़ - पृ. 34

तभी तो बादली आ गई है, नानी कई-कई बार निकल-निकल आसमान को देखते कह चुकी है।'[1] अगर दिन में बादल छा जाता है तो नानी का विश्वास है कि किसी ने अपने दरवाजे पर कुम्हड़ा फोडा है तभी तो बादली आ गई है। यह एक प्रकार का अंधविश्वास है। नानी पढ़ी-लिखी नहीं है यानी अनपढ़ है तभी तो वह इस विश्वास को मानती है।

'जुमेरात का नानी के जीवन में बहुत महत्व था। किसी नापाकी से पाक होने का गुसल वह आज के दिन नहीं करने देती थीं। घर में कोई मूली का नाम तक नहीं ले सकता था। जुमेरात को मूली लाना या पकाना सख्त जुर्म था। एक बार साजो खाला धोखे से खरीदकर ले आई थी तो खडे-खडे नानी ने घूरे में फिकवा दिया था। आज के दिन मूली नहीं पक सकती थी क्योंकि उसकी नापाक गंध सारे घर में भर जाती और नानी का कहना था - अज के दिन रूहें घर में या आस-पास आती-जाती रहती हैं, इस गंध के कारण वह भाग जाती है।'[2] इसी से पता चलता है कि नानी भूत-प्रेत जैसे अंधविश्वासों को मानती है। उनका मानना है कि जुमेरात के दिन मरे हुए पूर्वजों की रूह वहाँ आती है। और मूली के गंध से रूह भाग जाती है।

'समरांगण' उपन्यास में भी मेहरुन्निसाजी ने अंधविश्वासों का चित्रण किया है। इसमें सुहासनी अपनी बहु पृथा से कहती है "हाँ बहू, कहतेहैं, पुराने गडे धन, खज़ाने में जीव पड़ जाता है, वे धन की रक्षा करते हैं। साँप और बिच्छु उसके रक्षक होते हैं। साँप पहरा देते हैं और बिच्छु धन को घेरे रहते हैं, ये छोटे सैनिक होते हैं। धन को इधर-से-उधर सरका कर सुरक्षित रखते रहते हैं। जब भी लगे कहीं सैकड़ों काले बिच्छु कतार बाँधकर पंक्तिबद्ध तरीके से धीरे-धीरे रेंग रहे हैं, इसका मतलब है नीचे धरती से वह धन को सरकाकर कहीं पहूँचा रहे हैं। इनका यही काम है, इसलिए गाँव में लोग जब ऐसा

---

1. कोरजा - मेहरुन्निसा परवेज़ - पृ. 145
2. वही - पृ. 183

कुछ देखते हैं तो कहते हैं धन जा रहा है। ऐसे धन को कोई छूता भी नहीं, क्योंकि जो हाथ लगाएगा मौत के मूँह में जाएगा। ऐसा धन तो जिसके भाग्य का होगा, उसके आते ही यह अपने आप हट जाते हैं।"[1]

इसमें सुहासनी एक अशिक्षित नारी है। वह इस तरह के अंधविश्वासों को मानती है। उसका मानना है कि पुराने गडे धन और खज़ाने होते हैं और उनके रखवाले होते हैं साँप और बिच्छू। वे धन को संभालकर रखते हैं। ऐसे धन को कोई भी छूता नहीं है अगर छूए तो वह मर जायेगा। जिसके भाग्य में यह धन होगा, उसके आते ही ये बिच्छू और साँप उस खजाने से अपने आप हट जायेंगे। गाँव के अनपढ़ लोग ही ज्यादात्तर इसतरह के विश्वासों को मानते हैं।

समाज में ऐसी कई गलत धारणाएँ है जो अज्ञान और अशिक्षा के कारण रूढ़ हो जाती है लोग इसे परखे बिना परंपरा मानकर स्वीकारते हैं। ऐसी ही रूढ़ मान्यताओं का चित्रण मेहरुन्निसाजी ने अपने उपन्यासों में किया है। 'हमारे शास्त्रों में लिखा है बहू, कि पुरुष स्वामी होता है, इसलिए घर का, धन का मालिक वही होता है। जिस तरह राज्य के हर धन का मालिक राजा होता है। वैसे ही पत्नी के सभी धन का मालिक पति ही होता है।'[2]

पुरुषाधीन समाज ने पुरुष को सब का स्वामी बनाकर रखा है। स्त्री का, धन का, घर का सभी का स्वामी पुरुष को बनाकर रखा है। ये रूढ़ मान्यतायें बरसों से चली आ रही है। तभी तो समरांगण उपन्यास का पात्र सुहासनी भी समझती है कि एक आदर्श पत्नी होने के लिए ये बातें स्वीकार करने होंगे। वह अपनी बहु पृथा को बताती है कि पत्नी के सभी धन का मालिक पति ही होता है। ऐसी ही कई रूढ़ मान्यतायें आज भी चलती आ रही हैं।

---

1. समरांगण - मेहरुन्निसा परवेज़ - पृ. 232-233
2. वही - पृ. 234

कहा जाता है कि किसी व्यक्ति की मृत्यू होने पर उसका अंतिम संस्कार करना ज़रूरी है। वरन् उसकी आत्मा भटकती है। मेहरुन्निसाजी ने 'समरांगण' उपन्यास में इसका चित्रण किया है।

'क्या मरने के बाद उसके सारे संस्कार करने ज़रूरी है? हाँ, बहुत ज़रूरी हैं, वरना आत्मा भटकती है। अमर ने घाट पर बैठते हुए कहा, "हमारे गाँव के सब लोग क्रिया-कर्म करने फूल ठंडा करने 'गया' जाते हैं। यह मानते हैं कि यदि गयाजी नहीं गए तो आत्मा का घर में वास हो जाता है। वह देवता बनकर उपद्रव करने लगती है। हमारे एक पडोसी थे। उनके दादाजी ऐसे मर कर देवता बनकर उपद्रव करने लगे तो सबने कहा कि पूजा करके उन्हें मना कर 'गायाजी' ले जाओ और छोड़ आओ। घर में पूजा हुई, सारे गाँव के लोग स्टेशन तक छोड़ने आए। उस सज्जन ने अपनी अकेली की टिकट कटाई और गोद में ताँबे के लोटे में पानी-जल, फूल लेकर रेल में बैठ गए। जब वह गयाजी से लौटकर गाँव के स्टेशन पर उतरे तो उसके दादाजी ने हाँक लगाई-लल्ला, हम तो यही रह गए। वह दंग रह गए। गाँववालों से पूछा तो उन्होंने बताया कि तुमने दादाजी के लिए टिकट तो कटाई नहीं, अकेले ही टिकट कटाकर चले गए। इसबार तुम इनके नाम की टिकट कटाकर ले जाओ तब यह जाएँगे। उस व्यक्ति ने दोबारा पूजा कराई, फिर सबसे विदा ली और दो टिकट कटवाया। एक सीट पर खुद बैटे तथा दूसरी सीट पर लाल गमछा बिछाकर उस पर ताँबे का लोटा रखकर दादाजी को ले गए। गायाजी जाकर पूजा कराई तब से घर में देवता का उपद्रव कम हुआ। तब से हमारे गाँव में यह नियम सा हो गया है कि अब सभी लोग पूजापाठ कराने गयाजी में जाते हैं तथा बकायदा दो टिकट कटाकर ले जाते हैं। एक अपना दूसरे परिवार के देवता का होता है।'[1]

---

1. समरांगण - मेहरुन्निसा परवेज़ - पृ. 117-118

शहरों की अपेक्षा गाँव में ही इसप्रकार की रूढ़ मान्यतायें देखने को मिलती है। क्योंकि गाँव के लोग ज्यादात्तर अशिक्षित होते हैं। वे लोग इस तरह के विश्वासों को परंपरा मानकर स्वीकारते हैं। इसका खण्डन करने में वे लोग असमर्थ है। ऐसा करना वे पाप मानते हैं।

भारतीय समाज में सजीव-निर्जीव पशु-पक्षी, फल, पेड, रंग आदि कई चीज़ों को लेकर शुभाशुभ का विचार प्रचलित है। लोगों का मानना है कि अगर कोई काम अपनी इच्छानुसार हुआ तो शुभ और अगर नहीं हुआ तो अशुभ मानते हैं। डॉ. किशोर पवार कहते हैं "अनादिकाल से इसप्रकार के शकुन-अपशकुन की धारणा चलती आ रही है। इसलिए अनेक प्रकार के बेवकूफी से भरे, तथ्यहीन कल्पनाओं के जाल आज भी लोगों को चिपके हैं।'[1]

मेहरुन्निसाजी ने अपने उपन्यासों में इस शुभाशुभ का चित्रण किया है। "मोहन, पढ़ने-लिखने के बाद कभी-कभी कहावतों पर विश्वास नहीं होता, परंतु पुराने लोगों ने शुभ-अशुभ के जो संकेत रखे हैं बहुत सोच-समझकर ही रखे हैं। अब मैं सोचता हूँ हमारे मोहल्ले के कुत्ते दो-तीन महीने से दिन और रात क्यों रोते थे। बिल्लियों को भी कई बार मैंने रोते देखा। मैंने कई बार पत्थर फेंककर इन्हें भगाया है। एक बार तो अमीन और दुर्योधन मेरे घर से निकल कर जा रहे थे और कुत्ता ज़ोर से रोया। दुर्योधन ने हँसकर, मज़ाक में कहा भी भैया तुम्हारे गली के कुत्ते बहुत रोते हैं। अब विचार करता हूँ तो लगता है मृत्यु इनका पीछा कर रही थी।'[2]

कभी-कभी ऐसा होता है कि शिक्षित लोग भी शुभाशुभ पर विश्वास करने लगते हैं। 'समरांगण' उपन्यास के पात्र 'मोहन' एक पढ़ा-लिखा लड़का है। फिर भी अपने

---

1. भारतीय समाज में अंधविश्वास - डॉ. किशोर पवार - पृ. 18
2. समरांगण - मेहरुन्निसा परवेज़ - पृ. 175

दोस्तों के आकस्मिक मृत्यु के बाद वह भी शुभाशुभ पर विश्वास करने लगा। वह समझता है कि रात का कुत्तों और बिल्लियों का रोना मौत के आगमन का संदेश था। क्योंकि जब उसके दोस्त अमीन और दुर्योधन उनके घर आये थे तो कुत्ते बहुत रोये थे।

गाँव के अज्ञान और अशिक्षित लोगों का विश्वास है कि तावीज़ से सभी प्रकार की समस्याओं का परिहार हो जायेगा। इसका चित्रण भी मेहरुन्निसा जी ने अपने उपन्यासों में किया है। 'कोरजा' उपन्यास में इसके लिए एक उदाहरण है। "तुम कहो आपा तो मैं मौलाना साहब से कहकर तावीज बनवाकर आती हूँ उसे सूनी जगह पर जमीन में गाड़ देना, फिर देखना दूल्हे भाई कैसे घर आते हैं।"[1]

फातमा के पति उससे झगडा करके घर छोड़कर चला गया। तब उसके पडोसी फत्ते खाला फातमा से कहती है कि मौलाना साहब से तावीज़ बनवाकर उसे सूनी जगह पर ज़मीन में गाड दो तो फातमा के पति, जो घर छोडकर गया है ज़रूर वापस आयेगा। फातमा गाँव में रहनेवाली अशिक्षित युवती है इसलिए वह इसपर विश्वास भी करती है। अज्ञान अशिक्षा गरीबी जैसी समस्याएँ और वैज्ञानिक दृष्टि का अभाव जैसे कारणों से गाँव के लोग इस तरह के ढोंग में फँस जाते हैं।

आदिवासी लोग इतने भोले होते हैं कि उसे कोई भी ढंग सकता है। ढोंगी लोगों को समझने की अक्कल उनमें नहीं है। आदिवासी लोगों के अज्ञान का फायदा पाखंड़ी बाबा जैसे लोग उठाते हैं। इसका चित्रण मेहरुन्निसाजी ने कोरजा उपन्यास में किया है। "अरे बेटी यह आदिवासी? पूरे भेड-बकरी से कम हैं? लकड़ी लेकर जिधर हाँक दो उधर चलें। वह बाबा बिहारीदास ने कंठी चलाई लोग कंठी बाँधाकर उसके चेले बन गए। दंतेश्वरी बस्तर की देवी है। जिसे यह लोग पुरखों से मान रहे हैं। पर अब यह

---

1. कोरजा - मेहरुन्निसा परवेज़ - पृ. 33

भी राम-कृष्ण की पूजा करने लगे। व्रत रखने लगे, भजन गाने लगे हैं। उस बाबा बिहारीदास ने इन आदिवासियों पर वह रंग जमाया है कि बस। कहता है मैं ही तुम्हारा राजा हूँ, मैं ही राजा प्रवीरचंद भंजदेव हूँ। दुबारा जिंदा हो गया हूँ। उनकी आत्मा मुझमें प्रवेश कर गई है।"[1]

इस तरह के पाखंडी बाबा आदिवासी लोगों के भोलेपन और अशिक्षा का लाभ उठाते हैं। ये पाखंडी बाबा इन्हें बेवकूफ बनाये जा रहे थे। खुद को राजा घोषित कर यह बाबा असल में इनके पैसे छडपना चाहता था।

ऐसे ही कई सन्यासी लोग हैं जो दूसरों का फायदा उठाते हैं। मेहरुन्निसाजी ने 'अकेला पलाश' उपन्यास में भी ऐसे ही ढोगी सन्यासियों का चित्रण किया है। "मेरा झुकाव बच्चपन से ही धर्म की ओर था। धीरे-धीरे यह बढ़ता गया और एक दिन मैंने सन्यास लेते हुए घर छोड दिया। मेरी एक दोस्त थी, उसने भी सन्यास ले लिया था। उसी के बुलाने पर मैं पहले उसके आश्रम गयी, पर वह आश्रम अच्छा नहीं लगा। वहाँ का वातावरण बहुत गंदा था, आश्रम के नाम पर ढकोसला था, सन्यास के नाम पर बदमाशी होती थी। दुनियादार लोगों से भी बढ़कर ये लोग सेक्सी थे। हर नयी लड़की को पहले गुरु भोगता था, फिर उसके चेले, उसके बाद दीक्षा दी जाती थी। बात यहीं तक हो तो फिर भी ठीक था, पर वहाँ तो आश्रम के ज़रिए बडे-बडे खेल खेले जाते, बडे-बडे कारोबार चलाये जाते थे, बड़ी-बड़ी राजनीतियों में हिस्सा लिया जाता था। गोया यह कि हर बुरा काम वहाँ होता था। मुझसे कहा गया कि तुम सन्यासी बनकर दूसरी जगह जाओ, जहाँ तुम्हें जासूसी का काम करना होगा, और माल इधर से उधर भेजना पडेगा। मैंने जब इनकार कर दिया तो मेरे सारे वस्त्र उतारकर मुझे रस्सियों से बाँध दिया। भूखे-प्यासे मुझे

---

1. कोरजा - मेहरुन्निसा परवेज़ - पृ. 45

चार दिन रखा गया और फिर उसी रात दस व्यक्तियों ने मेरे साथ बलात्कार किया। दुख, पीडा और शोक से मेरी आत्मा त्राहि-त्राहि करने लगी, पर वहाँ से निकलने का कोई रास्ता नजर नहीं आया।"[1]

यहाँ धर्म के नाम पर पाप किया जा रहा है। लड़कियों को इज्ज़त लूटा जा रहा है। बुरा काम हो रहा है। धर्म की आड में बडे-बडे कारोबार चलाये जा रहे हैं और राजनीति में भी भाग लिया जा रहा है। ऐसे पाखड़ी सन्यासियों का चित्र मेहरुन्निसाजी ने इस उपन्यास द्वारा समाज के सामने रखा है।

छुआछूत जैसे धार्मिक समस्या को भी मेहरुन्निसाजी ने अपने उपन्यासों द्वारा प्रस्तुत किया है। छुआछूत का अर्थ है अस्पृश्यता। हिन्दु समाज में ही यह धार्मिक रूढ़ी ज्यादत्तर देखने को मिलता है। मेहरुन्निसाजी ने 'अकेला पलाश' उपन्यास में इसका चित्रण किया है। "मैडम, यह हरिजन है, इसका हाथ का छुआ हम लोग कैसे खा सकते हैं? सर्विस करने निकले हैं, तो इसका मतलब यह नहीं कि हम अपना धर्म भी नष्ट कर दें।"[2]

छुआछूत जैसी रूढ़ी मान्यताओं का खण्डन करने का प्रयत्न भी मेहरुन्निसाजी ने 'अकेला पलाश' उपन्यास द्वारा किया है। इस उपन्यास की नायिक तहमीना इसका खण्डन करके बताती है कि "दुनिया में धर्म नहीं है, ऐसी बात नहीं है, वह हैं। पर घर की दहलीज के अंदर तक, जब हम दहलीज के बाहर निकल आये हैं, बाहर का काम करने, तो यह जात-पाँत, ऊँच-नीच की भावना हमें त्याग देनी चाहिए।"[3]

---

1. अकेला पलाश - मेहरुन्निसा परवेज़ - पृ. 63
2. वही - पृ. 59
3. वही - पृ. 60

'अकेला पलाश' उपन्यास में डॉ.नाहिदाबाजी डॉ. महेश अग्रवाल के साथ प्रेम विवाह करती है। नाहिदबाजी मुस्लीम है और महेश हिन्दु। शादी के बाद महेश की माँ नाहिदबाजी के साथ बुरा बर्ताव करती है। महेश की माँ छुआछूत को मानती है। नाहिदबाजी कहती है "कुत्तों से भी बुरी गत होगयी है मेरी। उठते-बैठते ताने सुन-सुनकर कान पक गये हैं। छुआछूत इतना मानती हैं कि बस, मैं मुसलमान लड़की हूँ, इससे मेरे हाथ का छुआ नहीं खातीं। मेरी रसोई अलग है, उनकी अलग है, एक घर में दो चुल्हे है।"[1] नाहिदबाजी अपने दाम्पत्य जीवन का सुखद सपना लेकर ससुराल गयी थी। लेकिन वहाँ सिर्फ उसे दुःख ही मिला। नाहिदबाजी एक मुसलमान लड़की है और वे लोग हिन्दु। इसी कारण से ही सास के बुरे बर्ताव को भूलना पडता है।

इसप्रकार धार्मिक शोषण का चित्रण मेहरुन्निसा जी ने अपने उपन्यासों द्वारा किया है।

1.4 शोषित वर्गीय जीवन का सांस्कृतिक पक्ष

संस्कृति सामाजिक प्रथा का पर्याय ही है। मनुष्य समाज में रहकर जो कुछ करता है, सोचता है यह सब संस्कृति से जुडा होता है। विश्व की संस्कृति में भारतीय संस्कृति अपना अलग स्थान रखती है। संस्कार, सामाजिक रूढ़ियाँ, रीति-रिवाज़, त्यौहार, मेला, पर्व, वेश-भूषा, विवाह विषयक रीतियाँ आदि सब संस्कृति के अंतर्गत आते हैं। मानव जीवन में एक अभिन्न अंग के रूप में संस्कृति को माना गया है।

ग्रामीण समाज में होनेवाला मेला सांस्कृतिक भावना का प्रतीक है। आदिवासी लोग मेले को एक विशिष्ट त्योहार के रूप में मानते हैं, इस मेले में लोग अपने-अपने

---

1. अकेला पलाश - मेहरुन्निसाज परवेज़ - पृ. 171

सामान बेचते हैं और खरीदते हैं। 'अकेला पलाश' उपन्यास में भी इस तरह के मेले का वर्णन किया गया है।

'छोटी-छोटी टहनियों को जोडकर डाले गये मिनी, बेढ़गे स्टालों में शर्वत, पान और मिठाई का अंबार था। देहाती भजिए, गुजिया और खाजा की भरमार थी। गर्मागरम लाई चने की दुकाना की कतार थी। देहाती खाजा जो गुड से बनाया जाता है उसकी भी कई दूकानें थी; पाँच पैसे में चार की दर से बिक रहे थे। छल्ले जैसा यह पकवान बच्चों के खास आकर्षण का केन्द्र था। होटल जो यहाँ छोटे-छोटे तंबू गाड़कर स्थायी रूप से जम गई थी; उनमें सजी मिठाई और उन पर भिनकती मक्खियों को निहारती खडी थी कई नव-युवतियाँ। यह दूकाने ज़रूर मेले में लगी थी।'[1] इस तरह मेहरुन्निसा परवेज़ ने अपने उपन्यास 'अकेला पलाश' में मेले का और उसके माहौल का सुन्दर चित्रण किया है।

भारतीय ग्रामीण संस्कृति का एक अंग है लोक कथाएँ। लोक मानस में प्रचलित कथाएँ मानव के पारस्परिक विश्वास का प्रतिनिधित्व करता है। लोक कथाएँ विभिन्न तरह की होती है। जैसे राजा-रानी की कथाएँ, भूत-प्रेत की कथाएँ, पशु-पक्षी की कथाएं आदि। मेहरुन्निसाजी ने अपने उपन्यासों में इसप्रकार की लोक कथाओं का उल्लेख यंत्र-तंत्र किया है।

"उसे अचानक याद आया उस दिन गाँव की एक औरत उसे बैठाकर एक कहानी सुना रही थी कि बहुत पुराने जमाने की बात है गल गल एक अच्छे परिवार की लड़की थी। पर जब वह ब्याह कर ससुराल गयी तो उसने दरवाज़ा खोला दरवाज़े के पार दुख ही दुख थे और सारी उम्र वह दुख ही सहती रही - सास की, ननद की और पति की।

---

1. अकेला पलाश - मेहरुन्निसा परवेज़ - पृ. 228

दुखों ने उसे एक दिन घोट-घोटकर मार दिया। और जब वह अगले जन्म में गल गल चिड़िया बनकर आयी तो उसकी भटकी हुई आत्मा सूने सन्नाटे पर बैठी चीखती है, "मैं प्यासी हूँ.... मैं प्यासी हूँ....।"[1]

'कोरजा' उपन्यास में भी ऐसी ही लोककथाओं का चित्रण मेहरुन्निसाजी ने किया है। 'एक बार का नानी किस्सा बताती है : उनकी अम्मा को उनकी मरी हुई सौतेली सास सपने में आ-आकर तंग करती थी। वह परेशान हो गई थीं। किसी ने सलाह दिया कि दिल में मानो कि अब तुम सपने में आकर तंग करोगी तो मैं मूली और रोटी पर फातेहा दिलाऊँगी। उन्होंने यही माना। उसके बाद फिर कभी सपने में सौतेली सास ने तंग नहीं किया। रूहें मूली की गंध से बहुत नफरत करती हैं।'[2]

'समरांगण' उपन्यास में सूर्यग्रहण से संबन्धित एक लोक कथा का चित्रण किया है। 'पुरानी कथाओं के आधार पर चाँद और सूरज जब बहुत गरीब थे तब पाताल नगरी में चूड़ी मेहतरानी के घर कर्जा माँगने गए थे। कर्जा लेकर वह भूल गए। चूड़ी मेहतरानी का कर्ज़ा ब्याज जोड-जोडकर बढ़ता गया, जिसे सूरज और चाँद कभी चुका नहीं पाए। चूड़ी मेहतरानी को अपना कर्ज़ा खूब याद था। वह पाताल नगरी से अपना झाडू लेकर कर्ज़ा वसूलने धरती पर आ धमकती हैं और अपने झाडू से सूरज-चाँद पर गंदा झाडू मारती हैं, जिससे सूरज - चाँद का मूँह काला हो जाता है। चूडी मेहतरानी के वंशज मेहतर जाति के लोग धरती पर भी रहते हैं। वह कर्ज़ा माँगते है जिन्हें धरती के लोग दान में अन्न, रुपया-सोना-चाँदी देते हैं। चूडी मेहतरानी का कर्ज़ा समय के साथ बढ़ता गया और इतना अधिक बढ़ गया कि चाँद और सूरज कभी चुका नहीं पाए और उसी का दंड भोगते हैं।"[3]

---

1. अकेला पलाश - मेहरुन्निसा परवेज़ - पृ. 53
2. कोरजा - मेहरुन्निसा परवेज़ - पृ. 183
3. समरांगण - मेहरुन्निसा परवेज़ - पृ. 334

ये सारी लोक कथाएँ भारतीय संस्कृति के अभिन्न अंग है। ये ग्रामीण संस्कृति की पहचान है।

शिक्षा और आधुनिकीकरण के द्वारा ग्रामांचल की संस्कृति में बदलाव आ रहा है। आदिवासी लोग शहरी संस्कृति को अपना रहे हैं। शहर के लोगों की तरह वेश-भूषा पहनते हैं। उनके रहन-सहन में परिवर्तन आ रहा है। इस प्रवृत्ति का उल्लेख उपन्यासों में लेखिका ने किया है।

'वे आदिवासी लड़कियाँ जो दो हाथ की जाँघों तक लंबी धोती और जंगली फूलों का श्रृंगार कर ही अपने आपको पूर्ण मान लेती थी, आजकल नायलोन की साड़ी, ब्रेसरीज, ऊँचे ब्लाउज़, अफगान स्नो और रेमी पाउडर से पोते गए गाल और बालों में खोंसी गई ढेर सारी क्लिपें लगा कर जब निकलती है तो अजीब नमूना लगने लगती हैं। पतला नायलोन का ब्लाउज़, जिसमें अस्तर तक नहीं डाला गया है, उसमें से पूरा-पूरा शरीर दिखता है, ब्रेसरीज में बाँधा शरीर पुरुष-दृष्टि को अपनी ओर ज़रूर आकर्षित करता है पर वह और दूसरों की नज़र में अजीब हास्यास्पद लगने लगती हैं।'[1]

इससे पता चलता है कि आदिवासी लोग भी शहरी सभ्यता को अपना रहे हैं। वे लोग भी शहर के लोगों की तरह आधुनिक बनना चाहते हैं। वेश-भूषा में उनका अनुकरण करते हैं। आदिवासी लोगों की वेश-भूषा साधारण लोगों से अलग रहती है। वह अपने संस्कृति के अनुसार वस्ताभूषण पहनते हैं। अदिवासी औरतों की वेश भूषा का उल्लेख पलाश उपन्यास में मिलता है। औरतें ढेर सारी मूँगों की माला पहने रहती है।'[2]

---

1. कोरजा - मेहरुन्निसा परवेज़ - पृ. 101
2. अकेला पलाश - मेहरुन्निसा परवेज़ - पृ. 162

'कोरजा' उपन्यास में आदिवासी युवक की वेश-भूषा का चित्रण मिलता है। 'तभी दूर से कुछ आदिवासी युवक लाइन से एक के पीछे एक आते दिखे, उन्होंने सिर के पीछे जूडे बाँध रखे थे। गले में सोने की चीप माला थी और धनुष-बाण पकडे थे।"[1] इन लोगों की एक आदत है कि ये लोग जब भी चलेंगे एक-दूसरे के पीछे चलेंगे। चाहे कितनी भी लोग साथ हो सब एक दूसरे के पीछे कतार में चलते हैं। और इनकी वेशभूषा भी साधारण लोग से अलग है।

आदिवासी लोग टोना-टोटका जैसे कार्य करते हैं। वे लोग इसपर विश्वास करते हैं इसका चित्रण भी मेहरुन्निसाजी ने कोरजा उपन्यास में किया है। "हॉड़ी में बरसात के पानी को जमा कर उसे जमीन में मंत्र के साथ गाड़ दिया जाता है या किसी कुँआरी कन्या को एकदम नंगी करके उससे सूप में राख रखकर फटकवा देते हैं। जैसे-जैसे सूप की राख उड़ती है, वैसे ही उधर पानी से भरे बादल भी उड़ जाते हैं। साथ में सिरहागुना सब चलता है। यह टोना है बेटी, यहाँ बस्तर में बहुत चलता है।"[2]

ढीक समय पर बरसात नहीं हुई तो इन लोगों का विश्वास है कि किसी ने पानी को टोने से बाँध दिया है। इसलिए बरसात नहीं होता है। बरसात होने के लिए उल्टा मंत्र पढ़कर इस बंधन को खोलना पडेगा नहीं तो पानी नहीं बरसेगा। ऐसा विश्वास है गाँववालों का।

गाँववालों में विवाह संबन्धि अनेक रीतियाँ और रस्में हैं इसका चित्रण मेहरुन्निसा जी ने किया है। ऐसे ही रस्मों का चित्रण 'कोरजा' उपन्यास में भी है। "रब्बो आपा को हल्दी लगाई गई। रात को मिलाद थी, मिलाद के बाद उन्हें चौकी पर बैठाया

---

1. कोरजा - मेहरुन्निसा परवेज़ - पृ. 168
2. वही - पृ. 218

गया, रंगीन धागों से चौकी को चारों ओर से लपेट कर बाँधा गया था। रब्बो आपा को मैले कपडों में बैठाया गया था। उनकी गोद रज्जक के मलीदे और लड्डू से भरी गई। फिर सब औरतों ने उन्हें एक-एक कर हल्दी लगाई, निछावर कर रोईं।'[1] गाँव में ही इसप्रकार के रस्म ज्यादत्तर होते हैं। वे लोग इस तरह के रस्मों पर विश्वास रखते हैं।

'समरांगण' उपन्यास में भी ऐसे ही रस्मों का चित्रण है। 'पुराने समय में दूल्हा समय पर नहीं आता था तो उसकी तलवार, कटार से ही शादी रचाने का रिवाज़ था। ऐसे ही मुसलमानों में भी दूल्हा-दुल्हन शादी के समय इकट्ठा नहीं बैठते। दुल्हन भीतर रहती है, दूल्हा बाहर रहता है। निकाह हो जाता है। कई बार तो निकाह मस्जिद में होता है और दुल्हन घर पर ही रहती है।'[2] कई बार ऐसे रस्मों को पढ़कर हमें विचित्र सा लगता है। लेकिन इन लोगों के लिए यह उनकी संस्कृति का भाग है। जो पुरातन काल से चलते आ रहे हैं।

गाँव के लोगों का रीति-रिवाज भी विचित्र है। 'समरांगण' उपन्यास में इसके उदाहरण है। 'देखो, ऐसे ही हमारे गाँव में नियम है कि घर का कोई व्यक्ति घर से लापता हो गया या भाग गया तो वर्ष - भर उसकी बाट देखते हैं, फिर उसे मरा हुआ घोषित कर दिया जाता है। हमारे गाँव के एक व्यक्ति को डाकू उठाकर ले गए। बहुत खोज-खबर ली, पर उनका पता नहीं मिला। अंत में उनको बिरादरी की सभा बुलाकर मृत घोषित कर दिया गया। घर में रोना-धोना हुआ, उसकी पत्नी का सारा श्रंगार उतारा गया। सब लोग श्मशान तक गए और नदी में स्नान कर लौटे। उस परिवार के लोगों ने गाँव के लोगों को नीम की पत्ती और पानी हथेली में दिया। हमारे गाँव में सब लोग श्मशान से लाश जलाकर लौट कर उसी व्यक्ति के घर आते हैं, वहाँ उन्हें नीम की एक पत्ती औऱ लोटे से

---

1. कोरजा - मेहरुन्निसा परवेज़ - पृ. 195
2. समरांगण - मेहरुन्निसा परवेज़ - पृ. 73

ज़रा-सा जल देते हैं। उसे मूँह में रखकर चबाकर खाना पड़ता है। इसे 'कड़वा' खाना कहते हैं। इसका अर्थ हुआ कि मरे हुए व्यक्ति से आज संबन्ध समाप्त कर दिया गया। उस व्यक्ति के परिवार में उसके सारे क्रियाकरम कर दिए गए। जैसे तेरहवीं, गीतापाठ आदि कर दिया गया। सब लोग उस लापता व्यक्ति को भूल गए। दो-चार वर्षों में वह वापस लौटा तो उसे किसी ने गाँव में घुसने नहीं दिया। उसने अपने जिंदा रहने के सारे सबूत दिये, फिर भी उसे गाँव में प्रवेश नहीं मिला। वह गाँव के बाहर झोपड़ी बनाकर रहने लगा। गाँव के लोग उसे रोटी पहूँचा जाते थे, घर की रोटी खाने नहीं देते थे। बाद में फिर गाँव की, परिवार की पंचायत बुलाई गई, वहाँ उस व्यक्ति को जीवित माना गया तथा फिर उसके सारे संस्कार किए गए। जैसे मुंडन संस्कार हुआ, कनछेदन संस्कार हुआ, जनेऊ संस्कार हुआ, फिर उसकी पत्नी से विवाह किया गया। वह सारे कार्यक्रम तीन माह में कराए गए, फिर उसका प्रवेश घर में हुआ। इतने खटक्रम के बाद वह घर आ पाया, जबकि उसके चार बच्चे थे।'[1] अज्ञान और अशिक्षा के कारण ही इस प्रकार के रीति रिवाज़ गाँव में हो रहे हैं। इसका खंडन करना वे लोग पाप समझते है।

पर्व, त्योहार आदि भारतीय संस्कृति का आकर्षण है। इसका चित्रण भी मेहरुन्निसाजी ने अपने उपन्यासों द्वारा किया है। 'दुर्गा प्रतिमा की स्थापना हो रही थी। देवी के अभिषेक की तैयारियाँ हो रही थीं। जगह-जगह झाँकियाँ सजाई जा रही थी। नृत्य-अर्चना के समारोह के रंगारंग आयोजनों में लोग लगे थे। बंदनवार, तोरण द्वार बनाए जा रहे थे, उन्हें पुष्प-सज्जा से सजाया जा रहा था। घट पूजा-हवन-कन्या भोज और भंडार के कार्यक्रमों में लोग हमेशा बढ़-चढ़कर भाग लेते हैं।'[2] चैत मास की नवरात्रि पर्व का

---

1. समरांगण - मेहरुन्निसा परवेज़ - पृ. 118-119
2. वही - पृ. 182

चित्रण यहाँ किया गया है। त्योहार, पर्व आदि भारतियों की संस्कृति का अभिन्न अंग है। विशेषकर गाँव वालों के लिए।

व्रत, पूजा आदि भी भारतीय संस्कृति के अंतर्गत आते हैं। इसका चित्रण समरांगण उपन्यास में हुआ है। "प्रस्थान अनुष्ठान का अर्थ यह होता है कि घर से निकलने पर पंडित पत्रिका बाँचता था, तथा जाने का समय तिथि बताता था। अब उसके बताए समय तिथि पर तो निकल नहीं पाते थे, इसलिए, पूजा करके प्रस्थान अनुष्ठान किसी पडोसी के घर उसी शुभ घड़ी में रखवा देते थे।"[1]

इससे पता चलता है कि इसप्रकार के रीति-रिवाज़ आज भी चला आ रहा है। मनुष्य आधुनिक होने पर भी वह अपने रीति-रिवाज़ों में बदलाव लाना नहीं चाहता। विशेषकर ग्रामीण अंचलों के लोग।

1.5 शोषितवर्गीय जीवन का राजनैतिक पक्ष

स्वाधीन भारत की राजनीति ने शोषित वर्ग के सपनों को कुचलकर रख दिया। स्वतंत्रता के बाद भारत के लोग अपने देश के लिए प्रजातांत्रिक शासन प्रणाली स्वीकार कर ली। और भारत में जनता की सरकार आयी। जनता की भलाई के लिए ही सरकार बनाई थी। लेकिन यह प्रजातांत्रिक शासन व्यवस्था में अनाचार, भ्रष्टाचार, भाई-भतीजावाद आदि को दिन ब दिन बढ़ावा मिलता गया। इसप्रकार के शासन व्यवस्था ने शोषित वर्ग का जीना हराम कर दिया।

'भारतीय संविधान' स्वाधीन भारत की सबसे पहली और महत्वपूर्ण किताब है। इस संविधान ने भारतीय जनता को स्वातंत्र्य और समता आदि प्रदान किया है।

---

1. समरांगण - मेहरुन्निसा परवेज़ - पृ. 306

आजकल के राजनैतिक माहौल जनता के विश्वास को तोड-मरोडकर रख दिया है। ये सिर्फ पूँजीपतियों की पक्ष में है। आज के शासन व्यवस्था को पूँजीपतियों ने पैसे से खरीदकर रखा है। और जनता को अपनी हाथ की कठपुतलियाँ बना लिया है। मेहरुन्निसाजी ने अपने उपन्यासों में इस प्रकार के शोषण की ओर भी इशारा किया है। उनके 'कोरजा' उपन्यास में इसके लिए एक उदाहरण देख सकते हैं।

"सरकार ने यहाँ इलेक्शन के लिए जनरल सीट नहीं दी, आदिवासी सीट है। और यह अनपढ़ आदिवासी एम.एल.ए बनकर बाहर सिवाय हाथ उठाने के कुछ नहीं कर सकते। कम्मो, एक किस्सा सुनो, पिछले हफ्ते मैं दूकान में बैटा था कि एक एम.एल.ए साहब कंधे पर गजेटियर्स का गट्ठा लेकर आए और उसे रद्दी के भाव बेच कर चले गए। वह अनपढ़ एम.एल.ए हर दिन आनेवाले पेपर का आखिर करें भी तो क्या?"[1]

बस्तर जैसी आदिवासी क्षेत्र में इलेक्शन के लिए जनरल सीट के बजाय आदिवासी सीट दी गयी है। आदिवासियों में ज्यादातर अनपढ़ लोग होते हैं। ऐसे अनपढ़ लोगों को एम.एल.ए बनाकर बडे-बडे लोग उनका शोषण कर रहे हैं। राजनैतिक नेताओं और पूँजिपतियों ने अपने फायदा के लिए ही इन शोषित वर्गों को इलक्शन का सीट देकर एम.एल.ए बना देते हैं। इस तरह ये एम.एल.ए लोग इन पूँजीपतियों के हाथों का कठपुतलियाँ बन जाता है।

आदिवासियों के समस्याओं को पढ़ने के बहाने मिनिस्टर लोग बस्तर चले जाते हैं। वास्तव में यह लोग बस्तर में सिर्फ घूमने के लिए आते हैं। पूछने पर कहते हैं आदिवासियों के समस्याओं को पढ़ने के लिए आया है। मेहरुन्निसाजी ने 'कोरजा' उपन्यास में इसकी ओर इशारा किया है। 'बाहर से जितने मिनिस्टर आते हैं उनका एक

---

1. कोरजा - मेहरुन्निसा परवेज़ - पृ. 106

दिन का यही का प्रोग्राम होता है। असल में मिनिस्टर बस्तर में सिर्फ घूमने के उद्देश्य से आते हैं। एक दिन चित्रकूट, एक दिन बैलाडीला, एक दिन जगदलपुर, जहाँ सरकेट हाउस में मुड़िया डांस देखे, दो-चार लोगों से मिले, फिर चल दिए। यह है आज के मिनिस्टरों का बस्तर टूर।'[1] यदि इस टूर के उद्देश्य के बारे में पत्रकार पूछ लेंगे तो वे कह देंगे कि आदिवासियों की समस्याओं के लिए आये है। यह समस्याओं के बारे में कोई पूछेंगे तो एक भी समस्या का नाम भी नहीं गिन पायेंगे ये लोग।

स्वतंत्रतापूर्वक राजनैतिक शोषण का चित्रण मेहरुन्निसाजी ने 'समरांगण' उपन्यास में किया है। आज़ादी के पहले अंग्रेज़ों ने भारतीयों को ही मोहरा बनाकर भारत का शोषण करते थे। अंग्रेज़ी रुपयों के लालच में पड़कर निम्नवर्ग के लोग अंग्रेज़ों के गुलाम बन जाते थे। "गोपीलाल ने अपनी ज़मींदारी के बहुत से किसानों के बेटों की भर्ती पुलिस में करवा दी थी। किसान बहुत प्रसन्न थे। अंग्रेज़ी रुपया मिलता था, जिसका मूल्य बहुत था, फिर एक गाँव से एक लड़का भी पुलिस में भर्ती हो जाता था तो पूरे गाँव की इज्ज़त बढ़ जाती थी।"[2] अंग्रज़ी रुपयों के लालच में पडकर वह लोग यह नहीं जानते है कि वह अपने ही पैर में कुल्हाटी मार रहे हैं, ऐसा करके स्वयं शोषण का शिकार बन जाते हैं।

भारतीयों का लालच का फायदा उठाना अंग्रेज़ लोग अच्छी तरह जानते हैं। इसको व्यक्त करनेवाला एक संदर्भ 'समरांगण' उपन्यास में देख सकते हैं। "डोनेशन और बख्शीश में क्या नहीं हो सकता? बादशाहों का राज्य रहा, यहाँ की जनता बख्शीश, ईनाम लेना खूब जानती है। आज मोटी रकम काँग्रेस को डोनेशन दो और इनमें शामिल हो जाओ। इन्हें अपने आंदोलन चलाने के लिए रुपयों की सख्त जरूरत है। आपके पास

---

1. कोरजा - मेहरुन्निसा परवेज़ - पृ. 155
2. समरांगण - मेहरुन्निसा परवेज़ - पृ. 147

रुपयों की कमी नहीं है, फिर आपके पीछे हम खडे है।"[1] यहाँ गोपीलाल अंग्रेज़ों की आदमी बनकर कांग्रस में शामिल होने को तैयार हो रहे है। वह यह नहीं जानता कि उसे मोहरा बनाकर अंग्रेज़ लोग फायदा उठा रहा है। कोई अच्छी पद या पैसे के लालच देकर अंग्रेज़ों भारत के लोगों से ही गुप्तचर्या करवाते हैं।

अंग्रेज़ लोग भारत में कब्ज़ा करने के कारण ही हम भारतीय ही है। यह सच्च मेहरुन्निसाजी ने 'समरांगण' उपन्यास में गोपीलाल नामक पात्र के कथन के द्वारा पाढ़क के समक्ष रख देता है। 'गाँधीजी सफल होंगे, मुझे तो ऐसा नहीं लगता। गाँधीजी ज़रूर दृढ़ता और कठोरता से डटे हैं, पर हमारे देश में निष्ठा और आस्था का सदैव अभाव रहा है। हमेशा यहाँ अपना ही आदमी चोट देता है। भीतरी घात देना उसका स्वभाव है। सेंघ लगाकर वह दुश्मनों से मिला रहता है। ऐसे आचरण वाले देश में तुम कैसे उम्मीद करते हो कि स्वराज्य आएगा। अंग्रेज़ी हुकुमत कभी समाप्त नहीं होगी। राजनीति में हमेशा बलि देनी होती है और यह लोग मरने से डरते रहते हैं। संधि करके काम चलाते रहते हैं।"[2] उस समय अंग्रेज़ शासन उतना मज़बूत होने के कारण खुद भारत के जनता ही है। अंग्रेज़ों के विरुद्ध आवाज़ उठने के लिए वे डरते थे। हमारे देश में निष्ठा और आस्था का अभाव था। इसका लाभ उठाना अंग्रेज लोग अच्छी तरह जानते थे।

उस समय अंग्रेज़ शासन कैसे उतना मज़बूत हो गया इसका विवरण भी मेहरुन्निसाजी ने 'समरांगण' उपन्यास में किया है। "यदि मिर्ज़ा इलाही बख्श जैसे दोगले लोग मेजर हडसन से यदि नहीं मिले होते तो 1857 का भारतीय स्वाधीनता संग्राम का इतिहास दूसरा ही होता। अंग्रेज़ तो तभी चले गए होते, परंतु हमारे लोग बहुत भोले और सीधे थे। वह आज़ादी के लिए गुप्त बैठकें करते थे और उसमें अंग्रेज़ों के आदमी बैठे होते

---

1. समरांगण - मेहरुन्निसा परवेज़ - पृ. 241
2. समरांगण - मेहरुन्निसा परवेज़ - पृ. 281-282

थे। उनकी अपनी आस्तीनों में बडे-बडे साँप पल रहे, यह उन्हें पता नहीं होता था। मिर्ज़ा इलाही बख्श जैसे लोग, हर रियासत में थे। नतीजा यह हुआ कि देश पूरी तरह से अंग्रेज़ों के शिकंजे में आ गया।"[1] भारतीयों के भोलेपन का फायदा यह लोग उठाते थे। आज़ादी के लिए गुप्त बैठकें करते थे तो यहाँ भी अंग्रेज़ों के गुप्तचर होते थे। उन्हें इसका खबर नहीं थे। अपने ही घर में साँप को पाल रहा था यह वह नहीं जान पाया। इन सबका नदीजा यह हुआ की देश पूरी तरह से अंग्रेज़ों के शिकंजे में आ गया।

निष्कर्ष

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि मेहरुन्निसाजी ने अपने उपन्यासों में स्त्री विमर्श के साथ-साथ शोषित वर्ग की समस्या, उसका आचार-विचार, वेश-भूषा, पर्व, मेला, त्यौहार, रीति-रिवाज़ आदि का चित्रण भी प्रस्तुत किया है। उपन्यासों में चित्रित भाषा एवं शैली का अध्ययन अगले अध्याय में किया जायेगा।

❖❖❖

1. समरांगण - मेहरुन्निसा परवेज़ - पृ. 283